Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881; IMPACT FACTOR :8.017(2023); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer Reviewed and Refereed Journal: VOLUME:12, ISSUE:2(3), February: 2023
Online Copy of Article Publication Available (2023 Issues)
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: 2nd February 2023
Publication Date:10th March 2023
Publisher: Sucharitha Publication, India
Digital Certificate of Publication: www.ijmer.in/pdf/e-CertificateofPublication-IJMER.pdf

DOI: http://ijmer.in.doi./2023/12.02.66
www.ijmer.in

# हिंदी साहित्य और दलित आत्मकथा

**डॉ.हंसराज चौहान**

सह आचार्य – हिन्दी

राजकीय महिला महाविद्यालय,होंद,सीकर (राज.)

भारत में अनुसूचित जाति को दलित बताया जाता है। अब दलित शब्द पूर्णता जाति विशेष को बोला जाने लगा हजारों वर्षों तक अस्पृश्य या अछूत समझी जाने वाली उन तमाम शोषित जातियों के लिए सामूहिक रूप से प्रयुक्त होता था, जो हिंदू धर्म शास्त्रों द्वारा हिंदू समाज व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर स्थित थीं, और बौद्ध ग्रन्थ में पाँचवे पायदान पर है। संवैधानिक भाषा में इन्हें ही अनुसूचित जाति कहां गया है। भारतीय जनगनणा 2011 के अनुसार भारत की जनसंख्या में लगभग 16.6 प्रतिशत या 20.14 करोड़ आबादी दलितों की थी। आज अधिकांश हिंदू दलित बौद्ध धर्म की तरफ आकर्षित हुए हैं और हो रहे हैं, क्योंकि बौद्ध बनने से हिंदू दलितों का विकास हुआ हैं। दलित शब्द की व्याखा, अर्थ तुलनात्मक दृष्टी से देखे तो इसका विरुद्ध विषलेशण इस प्रकार है।

दलित –पीड़ित , शोषित, दबा हुआ, खिन्न, उदास, टुकडा, खंडित, तोडना, कुचलना, दला हुआ, पिसा हुआ, मसला हुआ, रौंदाहुआ, विनष्ट आदि है। दलित शब्द का शाब्दिक अर्थ है– दलन किया हुआ। इसके तहत वह हर व्यक्ति आ जाता है जिसका शोषण–उत्पीडन हुआ है। रामचंद्र वर्मा ने अपने शब्दकोश में दलित का अर्थ लिखा है, मसला हुआ, मर्दित, दबाया, रौंदा या कुचला हुआ, विनष्ट किया हुआ। पिछले छह–सात दशकों में दलित पद का अर्थ काफी बदल गया है।

डॉ० भीमराव अम्बेडकर के आंदोलन के बाद यह शब्द हिंदू समाज व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर स्थित हजारों वर्षों से अस्पृश्य समझी जाने वाली तमाम जातियों के लिए सामूहिक रूप से प्रयोग होता था। अब दलित पद अस्पृश्य समझी जाने वाली जातियों की आंदोलनधर्मिता का परिचायक बन गया है। भारतीय संविधान में इन जातियों को अनुसूचित जाति नाम से जाना जाता है।

**दलित आत्मकथा का स्वरूप :**

हिन्दी साहित्य में आत्मकथा हिन्दी की सभी विधाओं से रोचक एवं सजीव विधा है ,क्योंकि अन्य सभी विधाओं में साहित्यकार व्यक्तिगत नीतियों अथवा सामाजिक समस्याओं का ही वर्णन करता है ,जब आत्मकथा में वह स्वयं के नितान्त निजी व आत्मिक तथ्यों का ही उद्घाटन करता है। आत्मकथा व्यक्ति का वह अन्तः साक्ष्य है, जो उसकी सम्पूर्ण जीवन – यात्रा का प्रमाणिक , यथार्थपूर्ण एवं आत्मिक दस्तावेज प्रस्तुत करती है। ओम प्रकाश वाल्मीकि के अनुसार दलितों द्वारा लिखा जाने वाला साहित्य ही दलित साहित्य है। उनकी मान्यतानुसार दलित ही दलित की पीड़ा को बेहतर ढंग से समझ सकता है और वही उस अनुभव की प्रामाणिक अभिव्यक्ति कर सकता है। इस आशय की पुष्टि के तौर पर रचित अपनी आत्मकथा 'जूठन' में उन्होंने वंचित वर्ग की समस्याओं पर ध्यान आकृष्ट किया है।

**'दलित आत्मकथा ' की परिभाषा** के सम्बंध में विद्वानों ने जो विचार व्यक्त किए हैं वे इस प्रकार हैं–

1. श्यौराजसिंह बेचैन : ''दलित साहित्यकार ने जिस पीड़ा को भोगा है उसे जब वह मुखर अभिव्यक्ति देता है तो एक नई चेतना जन्म लेती है। जिसका अभाव हिंदी साहित्य में स्पष्ट देखा जा सकता है।''
2. मैनेजर पाण्डे : ''दलित आत्मकथा एक व्यक्ति की नहीं बल्कि एक समुदाय की आत्मकथा है। ''
3. डॉ.संजय मुनेश्वर : दलित आत्मकथाओं का वर्ण्य विषय उसमें वर्णित चरित्र, परिवेश, तथा भाषा द्वारा समाज की विशिष्ट पहचान रेखांकित होती है। इन आत्मकथाओं के माध्यम से दलित, पीड़ित, वंचित शोषित, लोगों का जीवन बड़े व्यापक रूप में अपनी संपूर्ण तथा कड़वी सच्चाई के साथ उभरकर सामने आया है।

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881; IMPACT FACTOR :8.017(2023); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer Reviewed and Refereed Journal: VOLUME:12, ISSUE:2(3), February: 2023
Online Copy of Article Publication Available (2023 Issues)
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: 2nd February 2023
Publication Date:10th March 2023
Publisher: Sucharitha Publication, India
Digital Certificate of Publication: www.ijmer.in/pdf/e-CertificateofPublication-IJMER.pdf

DOI: http://ijmer.in.doi./2023/12.02.66
www.ijmer.in

4. तानाजी जगताप : ''जिसमें दलित व्यक्ति अपने एवं अपने समाज के जीवनानुभवों का यथार्थ वर्णन करता है, जो युवावस्था में लिखी जाती है।
5. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर की विचारधारा से न्याय, समता, स्वातंत्रय एवं बंधुता को स्वीकार किया जाता है, जिसमें अस्पृश्य घुमंतू जीवन की व्यथा वेदना है वह आत्मकथात्मक लेखन दलित आत्मकथा है।''

इस प्रकार सर्वव्यापक दृष्टिकोण से दलित आत्मकथा की परिभाषा निम्नलिखित होगी – ''जिसमें दलित व्यक्ति, समाज, उसका दुःख, दैन्यावस्था, वेदना, लाचारी, भाषा, संस्कृति, रूढ़ि–परंपरा आदि का समाज बहुत ही यथार्थता से वर्णन करता है। जिसमें फुले, शाहू, आंबेडकर की विचारधारा से न्याय, समता, बंधुता का स्वीकार किया जाता है लोकशाही मानव मूल्यों का स्वीकार किया गया आत्मकथात्मक लेखन दलित आत्मकथा है।''

**दलित आत्मकथाओं की प्रमुख विशेषताएं** इस प्रकार हैं :–

1. भोगे हुए जीवन का यथार्थ चित्रण
2. शोषित सामाजिक,धार्मिक एवं जाति व्यवस्था का चित्रण
3. दलित आत्मकथा में दैन्य, दुःख, पीड़ा, व्यथा आदि समाज जीवन की विदारक स्थिति का वर्णन हुआ है।
4. दलित आत्मकथा में न्याय, स्वातंत्र्य, समता, एवं बंधुता इन मानव मूल्यों का चित्रण
5. दैववाद के स्थान पर कर्मवाद को महत्व।
6. लेखक के स्वंय के जीवन पर आधारित •
7. आत्मकथा लेखक के जीवन की दुर्बलताओं सबलताओं आदि का संतुलित और व्यवस्थित चित्रण।
8. आत्मकथा स्वयं का स्वलिखित इतिहास है।
9. भोगे हए यथार्थ का पुनरास्वादन व पुनराख्यान ।
10. व्यक्तिगत ठोस अनुभव एवं कोमल अनुभूतियों, तरल संवेदनाओं का चित्रण।
11. उद्भावनाओं एवं मार्मिक भावनाओं की सरल अभिव्यक्ति।

**प्रमुख दलित आत्मकथा और संवेदना :** साठ के दशक में दलित आत्म–कथाओं का आना साहित्य में किसी जलजले से कम नहीं था। पहले यह तूफान महाराष्ट्र में आया फिर हिंदी साहित्य में भी इसे आना ही था। साहित्य में इसे हम परिवर्तन का क्रांतिकारी दौर भी कह सकते हैं। सामाजिक बदलाव की इस धारा का किसी ने समर्थन किया तो किसी ने विरोध। कहीं सहमति थी कहीं असहमति। दलित साहित्य में सबकुछ यथार्थ था। सुंदर ढंग से बुनाई करने का दलित साहित्यकारों को वक्त ही कहां मिला। दलित साहित्य के जीवन से रिश्ते रहे। आंदोलन उनकी ऊर्जा रही। मेरी राय में वह जीवन उनका अपना है। उसे उन्होंने अपनी मर्जी से जीने की शुरूआत की। आखिर कब तक वे हिंदू धर्म की परम्पराओं तथा प्रथाओं को ओढ़ते–बिछाते रहते, कब तक वे सामंतों, पुरोहितों के सामने याचक बने खड़े रहते? देर से ही सही उन्होंने अपने फैसले स्वयं लिये। इस तरह दलित आत्मकथाओं में शिद्दत के साथ संघर्ष रेखांकित हुआ। उसके दुःख दर्द के साथ पीड़ा के स्वर उभरे। सच कहा जाए तो इन आत्मकथाओं ने सामाजिक चेतना जगायी।

हिंदी दलित साहित्य में 90 के दशक में पहली आत्मकथा 'अपने–अपने पिंजरे' आयी। हालांकि उससे पूर्व 'मैं भंगी हूं' भी आयी, लेकिन स्वयं भगवानदास जी इसे अपनी आत्मकथा नहीं मानते। वे इसे पूरी जाति की आत्मकथा मानते हैं। ललिता कोशल ने इसे परिवर्तन की प्रेरणा की संवाहक कहा है। बाद के दौर में 'जूठन', 'तिरस्कृत' तथा 'दोहरा अभिशाप' आत्मकथाएं प्रकाशित हुईं जो अपनी–अपनी तरह से दलित साहित्य के इतिहास में दर्ज हुईं। किसी अहिंदी भाषी दलित महिला की (कौशल्या बैसंत्री) 'दोहरा अभिशाप' पहली आत्मकथा थी। उसके बाद महिलाओं ने भी लिखना शुरू किया। पहल की सुशीला टाकभौरे ने मराठी में। हिन्दी साहित्य में चर्चित प्रमुख दलित आत्मकथाएं इस प्रकार हैं–

1. **अपने अपने पिंजरे – मोहनदास नेमिशराय, प्रकाशन– 1995.**
2. **मेरा सफर मंजिल – डी.आर.जाटव , प्रकाशन– 2000.**

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881; IMPACT FACTOR :8.017(2023); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer Reviewed and Refereed Journal: VOLUME:12, ISSUE:2(3), February: 2023
Online Copy of Article Publication Available (2023 Issues)
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: 2nd February 2023
Publication Date:10th March 2023
Publisher: Sucharitha Publication, India
Digital Certificate of Publication: www.ijmer.in/pdf/e-CertificateofPublication-IJMER.pdf

DOI: http://ijmer.in.doi./2023/12.02.66
www.ijmer.in

3. जूठन – भाग 1,2 – ओमप्रकाश वाल्मीकि, प्रकाशन– 1997,2013.
4. दोहरा अभिशाप – कौशल्या बैसंती, प्रकाशन–1999.
5. झोपड़ी से राजभवन – माता प्रसाद, प्रकाशन–2002.
6. तिरस्कृत – सूरजपाल सिंह चौहान, प्रकाशन– 2002.
7. घुटन – रमा शंकर आर्य, प्रकाशन – 2005.
8. मेरी पत्नी और भेड़िया – धर्मवीर, प्रकाशन– 2009.
9. नागफनी – रूपनारायण सोनकर, प्रकाशन– 2007.
10. शिकंजे का दर्द – सुशीला टाकभोरे, प्रकाशन– 2011.

**जूठन** – ओम प्रकाश वाल्मीकि द्वारा रचित इस रचना ने दलित साहित्य में अपना एक विशिष्ट स्थान बनाया है। इस पुस्तक ने दलित, गैर–दलित पाठकों, आलोचकों के बीच जो लोकप्रियता अर्जित की है, वह उल्लेखनीय है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी दलितों को शिक्षा प्राप्त करने के लिए जो एक लंबा संघर्ष करना पड़ा, 'जूठन' इसे गंभीरता से उठाती है। प्रस्तुति और भाषा के स्तर पर यह रचना पाठकों के अन्तर्मन को झकझोर देती है। भारतीय जीवन में रची–बसी जातिदृव्यवस्था के सवाल को इस रचना में गहरे सरोकारों के साथ उठाया गया है। दलितों की वेदना और उनका संघर्ष पाठक की संवेदना से जुड़कर मानवीय संवेदना को जगाने की कोशिश करते हैं। इसीलिए यह हिन्दी साहित्य के बीच बहुत लोकप्रिय हुई है।

**मुर्दहिया** : तुलसी राम द्वारा रचित प्रमुख दलित आत्मकथा है। 'जूठन' भारत के पश्चिमी उत्तर–प्रदेश की ब्राह्मणवादी, सामंती मानसिकता के उत्पीड़न की अभिव्यक्ति है तो 'मुर्दहिया' पूर्वी उत्तर प्रदेश के ग्रामीण अंचल में शिक्षा के लिए जूझते एक दलित की मार्मिक अभिव्यक्ति है। जहां सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक विसंगतियां कदम कदम पर दलित का रास्ता रोक कर खड़ी हो जाती है और उसके भीतर हीनताबोध पैदा करने के तमाम षड्यंत्र रचती है। लेकिन एक दलित संघर्ष करते हुए इन तमाम विसंगतियों से अपने आत्मविश्वास के बल पर बाहर आता है और जे.एन.यू. जैसे विश्वविद्यालय में विदेशी भाषा का विद्वान बनता है। यही इस रचना को एक गंभीर सरोकारों की रचना बनाता है जिसे पाठक और आलोचक स्वीकार करते हैं।

**दोहरा अभिशाप** : कौशल्या वैसन्त्री की यह आत्मकथा हिन्दी दलित साहित्य की पहली महिला आत्मकथा मानी जाती है.कौशल्या वैसन्त्री अपने जीवन की एकदृएक पर्त को जिस तरह उघाड़ कर पाठकों के सामने रखती हैं वह एक साहस का काम है. इस आत्मकथा की एक विशिष्टता है उसकी भाषा, जो जीवन की गंभीर और कटू अनुभूतियों को तटस्थता के साथ अभिव्यक्त करती है। एक दलित स्त्री को दोहरे अभिशाप से गुजरना पड़ता है– एक उसका स्त्री होना और दूसरा दलित होना। कौशल्या वैसन्त्री इन दोनों अभिशापों को एक साथ जीती हैं जो उनके अनुभव जगत को एक गहनता प्रदान करते हैं।

**शिकंजे का दर्द** : सुशीला टाकभौरे की इस आत्मकथा ने अपने पारिवारिक और सामाजिक संघर्ष को जिस तरह शब्दबद्ध किया है वह इसे दलित साहित्य में एक विशिष्ट स्थान दिलाता है। एक स्त्री होने की पीड़ा और दलित जीवन की विसंगतियों को अभिव्यक्त करने में एक आत्मकथाकार को सफलता मिली है। इसीलिए यह दलित साहित्य की एक श्रेष्ठ रचना है। दलित साहित्य के युवा हस्ताक्षर मुकेश मानस ने सुशीला टाकभौरे की आत्मकथा 'शिकंजे का दर्द' की समीक्षा के दौरान अपने आलेख में बहुत विश्लेषणपरक अंदाज में इस बात को पुष्ट किया है कि दलित विमर्श को जगह मिलना और अब तक वंचित पक्षों का उजागर होना बेहद जरूरी था। गोया "मुझे यह आत्मकथा एक दलित के जीवन के सच का आख्यान लगती है। इसमें लेखिका ने अपने जीवन के पूरे यथार्थ को बिना लागलपेट के लिख डाला है। इसलिए किसी को इस आत्मकथा में बहुत से अंतर्विरोध समय, समाज और देश के सच के अंतर्विरोध ज्यादा है, लेखिका के कम। अपने वैवाहिक जीवन के प्रसंगों को लिखने की शुरुआत करते वक्त लेखिका के मन में एक हिचक भी पैदा होती है कि ये सब घरेलू बातें हैं। इन्हें लिखने से क्या फायदा। लेकिन लेखिका को लगता है कि उस सच को लिखने में कोई बुराई नहीं हैं। अगर लेखिका अपने वैवाहिक जीवन के इन कटु प्रसंगों को न लिखती तो फिर हम घर के भीतर किए गए लेखिका के संघर्षों की गाथा से महरूम रह जाते। साथ ही उसके सशक्तीकरण की प्रक्रिया भी हमें एकांगी लगती। इस मायने में यह आत्मकथा हमें बेहद सहज और स्वाभाविक लगती है। इसमें कुछ भी बनावटी और गढ़ा गया नहीं लगता और इसमें कोई अतिरेक या विचलन भी नहीं है। जैसा कि दलित पुरुष साहित्यकारों की आत्मकथाओं में हमें देखने को मिलता है।" इस तरह यह कथन बहुत

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881; IMPACT FACTOR :8.017(2023); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer Reviewed and Refereed Journal: VOLUME:12, ISSUE:2(3), February: 2023
Online Copy of Article Publication Available (2023 Issues)
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: 2nd February 2023
Publication Date:10th March 2023
Publisher: Sucharitha Publication, India
Digital Certificate of Publication: www.ijmer.in/pdf/e-CertificateofPublication-IJMER.pdf

DOI: http://ijmer.in.doi./2023/12.02.66
www.ijmer.in

बड़ी जिम्मेदारी के साथ लिखा गया है जहाँ मुकेश मानस खुद दलित विमर्श में जुड़कर अरसे से काम कर रहे हैं। सुशीला जी का दुःख कई दलित स्त्रियों का अपना दुःख है। इस मायने में यह आत्मकथा भी सामूहिक स्वर की अभिव्यक्ति है।

**मेरा बचपन मेरे कंधों पर :** डॉ. श्योराज सिंह 'बेचैन' की आत्मकथा **'मेरा बचपन मेरे कंधों पर'** में एक दलित बालक के बचपन का गला बहुत ही बेरहमी से घोंटने का प्रयास किया गया, लेकिन लेखक का बाल–मन डरा नहीं जुटा रहा शिक्षा की लड़ाई के लिए।

**नागफनी** : रूपनारायण सोनकर की दलित आत्मकथा 'नागफनी' की यहाँ चर्चा करनी जरूरी है क्योंकि यह आत्मकथा भी अपने तमाम सवालों के साथ दलित मुक्ति के सवाल भी उठाती अनुभव हुई है। "दलित समाज के शोषण व अपमान का उल्लेख भी होली के सन्दर्भ में किया गया है। दलित स्त्रियों को मनोरंजन का सामान समझ अपमानित किया जाता है, साथ ही लेखक यह भी रेखांकित करता है कि हरिशंकर अवस्थी, उरेरी मिश्र जैसे व्यक्ति अपने घर की स्त्रियों को भी निर्दयतापूर्वक पीटते हैं। जिस प्रकार वे दलितों को जूते–लात से पीटते हैं, उसी प्रकार बहन और पत्नी को भी पीटते हैं तथा प्रताड़ित करते हैं। होली पर दलित स्त्रियों को अपमानित कर अपशब्द कहे जाते हैं। सवर्णों का उत्सव दलितों, कमजोरों, असहायों का मातम बन जाता है। यह उत्सव अच्छाइयों की जगह बुराइयों को बढ़ावा देते हैं। जैसे–जैसे होली जलती, प्रत्येक दलित स्त्री की जाति का नाम ले भद्दी गाली दी जाती तथा मखौल उड़ाया जाता। लेखक के लिए यह सब बर्दाश्त करना कठिन हो जाता।

**'झोपड़ी से राजभवन' :** माता प्रसाद द्वारा रचित रचना है। 'झोपड़ी से राजभवन' की राजनीति का सच केवल इतना ही है, जीवन–यापन की न्यूनतम सुविधाओं तक से वंचित एक दलित परिवार में पले–बढ़े माता प्रसाद के लिए क्षैत्र की जनता का विश्वास जीतना और देश के सबसे बड़े राजनीतिक दल में अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाना उपलब्धि है। और यह सब उन्होंने किसी की कृपा से नहीं, बल्कि अपनी मेहनत, लगन और ईमानदारी के बल पर किया। उत्तर प्रदेश सरकार में मंत्री, अरुणाचल प्रदेश के राज्यपाल तथा कांग्रेस के विभिन्न पदों पर रहते हुए उन्होंने जनता, विशेषतः दलितों के हित में जो महत्वपूर्ण कार्य किये वे अविस्मरणीय हैं। 'झोपड़ी से राजभवन' एक दलित साहित्यकार और वरिष्ठ राजनेता की सफल राजनीतिक आत्मकथा है।

निष्कर्ष रूप में यही कहा जा सकता है कि हिंदी भाषा के कथेतर गद्य साहित्य में दलित आत्मकथाओं की चर्चा करें तो हम पाते हैं कि वहाँ मौजूद समाज में पारिवारिक माहौल का जितना वर्णन आया है उसमें सबसे बड़ा चिंतनीय पक्ष स्त्री की कमजोर स्थिति है। रिश्तों के बीच की रिसती हुई ऊष्मा भी एक विषय हो सकता है। लगा कि स्त्री का दर्द लिखा जाना अभी शेष है। परिवार में पुरुष के भी अपने दुःख–दर्द हैं जो सामने आने बाकी हैं। स्त्री चेतना के मुद्दे पर अभी समाज में जागरूकता के लिहाज से काफी कार्य करने की आवश्यकता है। पुरुषवर्चस्ववादी समाज की जड़ें अभी ढीली नहीं हुई हैं। यह तस्वीर बदलने में अभी वक्त लगेगा। ईमानदारी से लिखना और अपने गलत बर्ताव को स्वीकारना, दोनों प्रक्रियाएँ जारी रखने की जरूरत है।

संदर्भ :

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि : जूठन,राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड ,नई दिल्ली 2015.
2. निर्मला जैन : जमाने में हम ,राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015.
3. सं० धीरेन्द्र वर्मा : हिन्दी साहित्य कोष ( भाग –1)
4. सं० डॉ.नगेन्द्र : मानविकी पारिभाषिक कोष ,साहित्यिक खंड ,
5. डॉ.भगवानशरण भारद्वाज : हिन्दी जीवनी साहित्य सिद्धान्त और अध्ययन
6. डॉ. कमलापति उपाध्याय : हिन्दी आत्मकथा साहित्य का शैलीपरक अध्ययन